सन्त आया बसन्त आया

(मंगलवार १४.२.६७)

आज बसन्त पंचमी है और सरस्वती पूजा भी है। पूजा कैसे की जाती है, इसका रूप अनेक प्रकार से अनेक व्यक्तियों ने अपनी धारणा के अनुसार रखा है। प्राचीन काल में ऋषि मुनियों ने इस दिन वेदों की रचना की थी और सरस्वती नदी के किनारे पर की थी। विद्वानों का कहना है कि सरस्वती वेदों में नहीं, चूँकि सरस्वती नदी के किनारे पर वेदों की रचना हुई थी, इसलिये सरस्वती की भी प्रधानता हुई। जो कुछ भी हो सरस्वती और बसन्त पंचमी एक ही पेड़ की दो शाखाएँ हैं। एक ही दिन दो विशेषताओं का समिश्रण हुआ है।

सर्वप्रथम हम बसन्त की ओर देखें तो बसन्त पंचमी है। ये पाँच कर्मेन्द्रियाँ और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ मनुष्य को ऊपर की ओर भी ले जाती हैं और नीचे की ओर भी, पंचमी है ये। और बसन्त है, तो – बसन्त यों ही आप देखती हैं कि हेमन्त के बाद बसन्त का आगमन होता है, किन्तु, आप जानती हैं जब कभी बसन्त ऋतु या बसन्त पंचमी के विषय में कहा जाता है तो बार-बार मुझे ये बातें याद आती हैं और मैं प्रत्येक बसन्त पंचमी पर कहा करता हूँ – 'बसन्त आया जब वह सन्त आया।' जिस सन्त ने हमें शान्ति दी है, जिस दिन उसके दर्शन हुये, हमारे जीवन में बसन्त आया, अन्यथा, हेमन्त ऋतु की तरह हमारे पत्ते (विचार) झड़ रहे थे, दिन और रात के रूप में। जैसे दिन और रात हैं, उसी तरह से पेड़ में पत्ते हैं। ये जीवन जो बना हुआ है, इस जीवन रूपी पेड़ में क्या लगा है? दिन और रात, और ये दिन और रात पत्तों

की तरह झड़ते चले जा रहे हैं और अन्त में हमारी अवस्था उस पेड़ की तरह हो जाती है जिसमें पत्ते नहीं। अन्तिम घड़ियों में हमें याद आता है, हम किसी को याद करते हैं, कोई बरबस हमारी आँखों के सामने खड़ा हो जाता है। वह कौन है? यदि हमने प्रभु का चिन्तन किया है तो हम उस बालक की तरह अपने प्राणों से अधिक प्रिय को उसी तरह पहचानेंगे, जैसे मेले में हजारों औरों को न देखता हुआ बालक केवल अपने पिता को पहचानता है। हमारे सगे-सम्बन्धी शरीर के, पुत्र, पिता, भाई, बन्धु, स्त्री सब मेले के साथी हैं और हमारे प्राणों का पति (प्रभु) हमारे प्राणों के साथ है। प्राण चले लेकिन प्रभु नहीं जाता। उड़ेगा यह हंस, लेगा मनुष्य एक दिन अन्तिम श्वास, लेकिन श्वास के पहले यदि विश्वास न आया तो यह श्वास बेकार। यदि मनुष्य ने भगवान के नाम पर विश्वास नहीं किया तो यह श्वास किस काम आया? निरर्थक ही मनुष्य ने भूमि भार होकर रहना स्वीकार किया।

हम भूमि के भार नहीं, हम तो भूमि पर हार की तरह रहना चाहते हैं। हार की तरह तभी हम रह सकेंगे जब दुनिया हमसे हार जाये, हम दुनिया से नहीं हारते। लेकिन हम छोटी-छोटी बातों में दुनिया से हार जाते हैं, थक जाते हैं। घर वालों से थकते हैं और बाहर वालों से भी थक जाते हैं। ये हमें हराने के फेर में पड़े हैं, लेकिन हम हारेंगे नहीं, हम हारने के लिये नहीं आये। हम तो प्रभु का नाम लेते हुये, प्रभु की शरणागति में ही अन्तिम श्वास लेते हुये, उसी के चरणों में ये श्वास अर्पित करेंगे और कहेंगे – ऐ श्वास को देने वाले! तैंने श्वास भी दिया और विश्वास भी दिया। यदि तू अपना विश्वास न देता, केवल श्वास ही श्वास देता तो यह केवल एक साधारण धौंकनी की तरह होता।

विश्वास कैसे हो? जहाँ दुनिया में स्वार्थ की नदी बहती हो, जहाँ बाप बेटा पैसे की लड़ाई में लगे हुये हों, जहाँ बाप से आधा हिस्सा लड़का माँगने के लिये खड़ा हुआ हो, जहाँ सास और बहु में झगड़ा हो, जब सब अपने-अपने दाँव में चतुर हों, वहाँ विश्वास कैसे हो? आता है विश्वास और अच्छी तरह आता है। कब? जब विश्वासी मिलता है। वो कौन है विश्वासी? जिसे देखते ही मनुष्य के हृदय में विश्वास आता है। वो भीतर में एक अन्तरात्मा का खेल है और यह विश्वास ही मनुष्य को बहुत दूर पहुँचा देता है। जैसे अभी कहा गया कि विश्वासी को देखकर विश्वास आता है, तो जिसे हम विश्वासी कहते हैं उसने भी किसी का विश्वास किया होगा। जिसे हम आज सन्त कहते हैं उस सन्त ने भी कभी किसी के चरणों के पास बैठ कर कहा होगा कि बस अंत कर, बसन्त आया है। यह दुनियादारी के झगड़ों का अंत कर, बस कर, मुझे नहीं चाहिये। मैं तो केवल तेरे चरणों की रज चाहता हूँ। यह ज्ञान-ध्यान-जप ये मुझे नहीं चाहिये। मुझे चाहिये केवल तेरे चरणों की रज। यह विश्वास जब मनुष्य के भीतर विश्वासी को देखकर आता है, उस समय न माला है, न जप है, न तप है केवल उसका नाम है। और यह दुनियादारी का विश्वास नहीं है, इन प्राणों का विश्वास है और प्राणों का विश्वास कभी निरर्थक जाने वाला नहीं। दुनिया धोखा दे सकती है किन्तु हमारा परम् पिता, जगत् पिता, अरे! यदि वह अपने पुत्र को ही धोखा देगा, अपने जिगर के टुकड़े को ही धोखा देगा तो वह कैसा पिता है? वह पिता नहीं जो अपनी सन्तान को धोखा दे और हम तो सन्त की सन्तान हैं। हमें धोखा देने वाला कौन? सन्त ने हमें धोखा नहीं दिया, शान्ति दी है, विश्वास दिया है (प्रभुका), अपने चरणों की रज दी है। अपना प्यार दिया है, यह अपनापन है।

वेदशास्त्र हम नहीं जानते, हमने बड़ी-बड़ी किताबें नहीं पढ़ी। हमने – जिसे दुनिया उपवास कहती है वह उपवास भी नहीं किया, लेकिन हाँ, दूसरे शब्दों में 'उप' कहते हैं 'समीप' को, 'वास' कहते हैं 'रहने' को। सौभाग्य से हमें सन्तों के पास बैठने का अवसर प्राप्त हुआ है और आज उसी सन्त की यह कृपा है कि हमें सत्संगियों के दर्शन होते हैं। कोई यह न समझें कि बोलने वाला बहुत बड़ा है और हम सुनने वाले; हम तो सुनने वाले हैं जी, हममें क्या रखा है? अरे भई, बोलने वाले तो बहुत मिलेंगे लेकिन सुनने वाला नहीं मिलता। बोलने वाले भगवान कृष्ण थे और सुनने वाला सरल हृदय अर्जुन था, तभी गीता सुनाई गई, प्रेम से, भाव से, आनन्द से। भगवान का मिलना कठिन नहीं लेकिन भक्त का मिलना कठिन है। भगवान तो मिल जाते हैं लेकिन भक्त का मिलना कठिन है। दुनिया के भक्त तो बहुत मिलते हैं लेकिन भगवान का भक्त नहीं मिलता। आप कह सकती हैं कि ये इतने बड़े-बड़े मन्दिर बने लाखों करोड़ों रुपये लगाकर, क्या यहाँ भगवान नहीं? अरे भाई, भगवान तो एक गरीब की झोपड़ी में भी है, राजा के महल में भी है? आप बतलाओ तो सही किस जगह हवा नहीं है? वह वायु गरीब को भी मिलती है, धनी को भी मिलती है। जो अनाचार, अत्याचार और निरर्थक कार्यों में लगा हुआ है, वायु तो उसको भी मिलती है। साँप को भी मिलती है, सिंह को भी मिलती है और गाय को भी मिलती है, लेकिन गाय तो सिंह नहीं बनती और सिंह तो गाय नहीं बनेगा। लेकिन यह सन्त की कृपा है, यह सन्त की विशेषता है कि वह गाय और सिंह को एक घाट पर पानी पिलाकर छोड़ता है। साधारण से साधारण व्यक्ति के भीतर जो हिंसक वृत्तियाँ जाग रही हैं, सिंह की तरह क्रोध में आकर जो चिल्लाता है, चिंघाड़ता है उसे भी वह सन्त अपनी प्रेममयी वाणी से शान्त करके गाय की तरह बना देता है – ये है सन्त की कृपा।

जिन्होंने नहीं देखा, वे आज भी देखें, जो लोग यह समझते हैं कि हम पुरुषार्थ के बल पर भगवान को पा लेंगे, हम उनसे यह नम्र निवेदन करेंगे कि उस विराट को आप कच्चे धागे से बाँध नहीं सकते। भगवान महाबली हैं और पुरुषार्थ एक कच्चे धागे की तरह है जिसमें अहंकार ही अहंकार पैदा होता है। अनेक धर्म वाले हैं जिन्होंने कर्म को प्रधानता दी है और आज भी जहाँ कहीं भी आप देखिये कर्म करने वाले को लोग आज बहुत बड़ा मानते हैं, क्योंकि उनके कर्म दिखलाई देते हैं। गंगा स्नान करने वाला व्यक्ति, मन्दिर में जाने वाला व्यक्ति, तिलक छाप वाला व्यक्ति सबको दिखलाई देता है, लेकिन जिसके हृदय में गंगा बहती हो, जो कंठी नहीं बाँधता, कहता है – तू मेरे कंठों में है, मैं और क्या कंठी बाँधू? तू मेरे हृदय में है। मैं और किस गंगा में स्नान करूँ। यह कोई गंगा और कंठी की निन्दा नहीं। भाई, यह तो सन्तों की विशेषता है कि वह निरर्थक विचारों को, जिस विचार में पड़ी हुई दुनिया निरर्थक कष्ट पा रही है, दूर करते हैं अपनी वाणी से, प्रेममयी वाणी से। वे उपदेशक नहीं होते।

आप शायद सोच रहे हों कि उपदेशक को ये क्या कहते हैं? देखिये, एक होता है देश, एक होता है उपदेश। जैसे – हम राजस्थान के रहने वाले, वासी नहीं हैं बंगाल के, हम प्रवासी हैं। यहाँ हमने घर बनाया है, हमारा घर राजस्थान है, अमुक गाँव है। इसी तरह से ये उपदेशक हैं। दूसरे देश में रहने वाले है। हम जिस देश के हैं उस देश के ये उपदेशक नहीं। तो आप ख्याल कीजिये कि जब देशी से देशी मिलता है तो मनुष्य दिल खोलकर बातें करता है, और ये उपदेशी, जो केवल उपदेश देकर ही अलग हो जाते हैं, वो हमारा क्या भला करेंगे? वो हमें क्या समझायेंगे?

हम तो यहाँ आपको उपदेश देने के लिये नहीं आए। यदि आप यह समझते हैं कि हम उपदेश देने के लिये आये हैं तो हमें न आप समझ पाये और न हम आपको समझ पाये। हम तो आपको उपदेश देने के लिये नहीं आये। हमारे पास तो उपदेश है नहीं। कुछ मिनट जो अभी तक आपके सामने मैंने बातें रखी। उसमें कहीं नहीं आपसे कहा कि ऐसा मत करो, वैसा मत करो। देखिये, ये जितनी चीजें हैं ये प्रारम्भ की है। जैसे – बच्चा पढ़ने के लिये स्कूल नहीं जाता, तो माता-पिता उसे लालच देकर, धमकाकर, डराकर, किसी तरह से पाठशाला भेजते हैं। वैसे ही जो लोग भगवान का नाम प्रेम से नहीं ले पाते, उन्हें स्वर्ग और नर्क दोनों का रूप दिखाकर यह कहा जाता है कि भजन करो। यदि भजन नहीं करोगे तो नर्क जाना पड़ेगा और यदि भजन करोगे तो स्वर्ग की प्राप्ति होगी। बच्चे पढ़कर आओगे तो मिठाई मिलेगी और पढ़ने के लिये नहीं जाओगे तो घर पर भी मार खाओगे और शिक्षकों से भी मार खाओगे। वही बालक जब एम.ए. और बी.ए. पढ़ता है, उस समय माँ को भी कुछ कहना नहीं पड़ता और पिता को भी कुछ कहना नहीं पड़ता। दिन नहीं देखता, रात नहीं देखता, उसे केवल विद्याभ्यास के अलावा कुछ नहीं दिखलाई देता। ये जो रूप है, ये रूप सन्तों का है। जिसको लगन लग जाती है वह मगन हो जाता है। ये कथन नहीं, जो करके देखता है वही जान सकता है कि लगन क्या है और मगन होना क्या है?

मीरा के भजन गाने से कुछ नहीं होता है। मीरा होने में आनन्द है, लेकिन घर नहीं छोड़ना है, यह साथ में आप समझ लो। एक घर छोड़कर पचास घर बनाने में कोई शान नहीं। शान है भगवान के नाम में। जहाँ कहीं भी बैठो सत्संग की चर्चा। जिसके हृदय में थोड़ा कुछ भाव हो, उसके सामने

दो बातें करके देखो, तुम्हारे भीतर भाव आता है कि नहीं। यदि किसी मनुष्य की छाती पर वजन रख दिया जाये, काफी वजन रख दिया जाये और उससे कहा जाये कि उठ। तो उसका उठना कठिन है क्योंकि छाती पर भार रखा हुआ है। तो जब तक आपकी छाती पर दुनिया के विचारों का भार पड़ा हुआ है चिन्ता, दुःख, शोक, निरर्थक भय, आशंका – ये सब चीजें जब तक आपके दिल में है तब तक आपको कैसे शान्ति मिल सकेगी? लेकिन सन्त क्या करता है? विचारों के द्वारा उस वजन को हटा देता है। एक तो दो मन का लोहे का वजन रख दिया जाये, और एक पाँच माला रख दी जाये आपके वक्षस्थल पर, तो वह दो मन का वजन तो आपको उठने नहीं देगा लेकिन पाँच माला का कोई वजन नहीं होता। आसानी से आप उठ सकते हैं चल सकते हैं। जिस दिन आपका वह मानसिक वजन, बोझ, भार भगवान के चरणों पर अर्पित होगा, उस रोज आपके भीतर जीवत्व के स्थान पर शिवत्व का भाव स्वतः उदय होगा। ये है सन्तों का भाव।

भजन गाते हैं – "कहाँ तू भटक रहा है?" अरे, भटकना क्या है? – यह तो कबीर से पूछो। कबीर सीधा-सादा सा ढंग बतलाता है – "भटकते दर-बदर फिरते, जो बिछुड़े हैं पियारे से।" जो प्रभु से बिछुड़ जाता है, वही दर-बदर भटकता फिरता है, मेरा बाप कहाँ, मेरा बाप कहाँ खो गया है। खो गया है मेले में, संसार के मेले में , मेरा बाप खो गया है। मैं जाऊँ कहाँ? शान्ति कहाँ? क्या करूँ मैं?

"हमारा यार है हम में, हमन को इन्तजारी क्या "। हमारा प्रभु हमारे भीतर है, हमें किसकी प्रतीक्षा करनी है। मीरा जो वियोग में पागल हो गयी, जब उससे पूछा गया, अरी पगली, किसके वियोग में है? कहा – ये वियोग

की भावना तो मैं इसलिये करती हूँ कि जब तक वियोग नहीं होगा तब तक संयोग का आनन्द नहीं आता। वही भाई तीसों दिन आपके पास रहता है, वही पिता साल भर आपके पास रहता है, ठीक है, आनन्द है साधारण सा। पाँच दिन के लिये वह पिता अगर दिल्ली चला गया तो वो पाँच दिन आपके लिये बार-बार, उनकी याद दिलाता है। अरे, इतने दिन पिताजी थे तब नहीं याद आते थे और पाँच दिन पिताजी दिल्ली गए, बहुत याद आते हैं। ये क्या बात है? ये वियोग है और बिना वियोग के संयोग का आनन्द नहीं आता। उसने (मीरा) कहा – "जाके पिया परदेश बसत है, लिख-लिख भेजत पाती मेरे पिया मेरे ह्रदय बसत है, ना कहूँ आती जाती।"

आप सोचो और समझो, प्रत्येक मनुष्य के ह्रदय में कौन सी भावना जागृत होती है? वह भावना है प्रेम की, आनन्द की, प्रभु की शरणागति की। बाबा जी कहा करते थे – "तत्वमसि" – वो तू ही है। तो उनकी शरण लेने के बाद हम क्यों कहते हैं – शरणागति-शरणागति, प्रेम करो। उसका एक बहुत सीधा-सादा उत्तर है मेरे पास। वह यह है कि जिनको बाबा ने यह भाव दिया – "वो तू ही है", अहंकार की जागृति मैंने उनमें देखी। उस समय मेरे ह्रदय ने कहा, है तो वो तू ही क्योंकि सन्त की वाणी गलत नहीं, लेकिन पाना होगा उसे चरणों की धूल में मिल करके। वह केवल 'तू ही है' कहने से यह भावना नहीं जगती। सन्त कृपा करके व्यक्ति को एक ऐसा भाव दे देते हैं कि वह कह उठता है कि 'तू वो ही है'। बाबा मैं समझ गया, लेकिन अभी तक उसके भीतर का कल्मष, उसके भीतर का अभिमान, उसके भीतर की निरर्थक भावनायें शान्त नहीं हुई। इसलिये 'वो तू ही है' कहना उसी समय तक सार्थक था जब तक कि वह सन्त की छत्रछाया में उनके समीप बैठा हुआ था। वह यदि अपने अहंकार को प्रभु के चरणों में रखकर यह कहे कि हूँ

तो मैं तेरा ही रूप, लेकिन ये मेरे भीतर कैसे-कैसे निरर्थक भाव आते हैं, यदि तेरी कृपा हो जाए तो निरर्थक भाव दूर हों। अब क्या होगा? वह (सन्त) कहेगा – इसने तो रावण वाला सिर पहले ही झुका दिया। दस सिर थे, एक ग्यारहवाँ सिर गदहे का था रावण के सिर पर, यह रामायण की कथा है।

बात यह है जो मनुष्य के भीतर अहंकार है, वह कैसे जाये? वह तो तभी जायेगा जब कि कहे – मैं कुछ नहीं, मैं कुछ नहीं। तू ही है, तू ही है। तो आप जानती हैं पैरों पर पड़े हुये व्यक्ति को वह क्या करता है? यदि केवल आशीर्वाद दे दिया उसने और वह खड़ा हो गया तो मैं समझूँगा कि गिरने वाले ने अभी नम्रता का पूरा आनन्द नहीं लिया। गिरे तो ऐसा गिरे कि जिसके सामने गिरे वह हृदय से लगाये, आलिंगन करे, उसे खड़ा कर दे। छाती से लगाकर कहे – तुझमें, मुझमें कोई अन्तर नहीं। वो गिरना किस काम का जो केवल आशीर्वाद लेकर चला आया। वह सन्त की कौन सी पूजा, जो केवल चमत्कार के लिये की जाती है। सन्त की पूजा, सन्त होना है। बसन्त आये और इस बसन्त में ही उस सन्त की कृपा से नये-नये भावों की नयी-नयी पत्तियाँ हमारे हृदय में जब खिल उठेंगी, तभी हमारे लिये बसन्त का आना सार्थक। प्रकृति का बसन्त बाहरी और ये भीतरी प्रकृति का बसन्त जिस दिन आयेगा, उसी दिन वह (प्रभु) आयेगा। उस रोज सन्त की भावना हमारे हृदय में आयेगी।

मैं बोल नहीं पा रहा हूँ। मेरा गला बहुत खराब है और ये जो कुछ मैं बोल गया आपके सामने, यह सब उसकी कृपा है। अन्यथा, बोलने के समय बहुत कष्ट होता है, गले का यंत्र बिगड़ा हुआ है सर्दी के कारण। इसलिये

आज का यह प्रवचन समझो आप, उपदेश तो मैं देता नहीं, पहले ही कह चुका आपसे। बस यहीं तक।